INTERNATIONAL JOURNAL OF ARTS, COMMERCE & EDUCATION
A Multidisciplinary Peer-Reviewed, Refereed, Open Access Journal,
https://avjournals.com/ e-ISSN: 2347-7687, Vol 13, Issue 1, January-June 2025

प्रेमचंद के नाटकों का राजनैतिक परिप्रेक्ष्य

हेमलता चंद्राकर[1] , डॉ. मो. अज़हर खान [2]
1. शोधार्थी भारती विश्वविद्यालय, दुर्ग (छ. ग.)
2. शोध-निर्देशक , सहायक प्राध्यापक (हिंदी विभाग), भारती विश्वविद्यालय, दुर्ग (छ. ग.)

शोध-सार- हिंदी साहित्य के महान कथाकार मुंशी प्रेमचंद ने जहाँ उपन्यास और कहानियों के माध्यम से समाज को दिशा दी, वहीं उनके नाटक भी सामाजिक चेतना और मानवीय मूल्यों के संवाहक बने। यद्यपि प्रेमचंद का नाटक लेखन सीमित रहा, फिर भी 'संग्राम', 'कर्बला', और 'प्रेम की वेदी' जैसे नाटकों ने साहित्यिक जगत में गहरी छाप छोड़ी। मुंशी प्रेमचंद ने अपने नाटकों के माध्यम से सामाजिक यथार्थ, ऐतिहासिक चेतना और मानवीय संवेदनाओं को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। यद्यपि वे मूलतः कथाकार थे, फिर भी उनके नाटक साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। प्रेमचंद ने अपने पात्रों का चुनाव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से किया है, किंतु उनकी दृष्टि समाज से उपेक्षित वर्ग की ओर अधिक रहा है। प्रेमचंद ने आदर्शोन्मुख यथार्थवाद को अपनाया है। उनके पात्र प्रायः उपेक्षित वर्ग के प्रतिनिधि रूप में सामने आते हैं। घटनाओं ने विकास के साथ-साथ उनकी रचनाओं में पात्रों के चरित्र का भी विकास होता चलता है। उनके कथोपकथन मनोवैज्ञानिक होते हैं। प्रेमचंद सच्चे समाज सुधारक और क्रांतिकारी लेखक थे। उन्होंने अपनी विभिन्न कृतियों में अनेकों बार दहेज, बेमेल विवाह आदि का सबल विरोध किया है। नारी के प्रति उनके मन में स्वाभाविक श्रद्धा थी। समाज में उपेक्षिता, अपमानिता और पतिता स्त्रियों के प्रति उनके साहित्य लेखन में सहानुभूति स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

बीज-शब्द (Keywords)- सामाजिक चेतना, मानवीय मूल्य, सांप्रदायिकता, ऐतिहासिकता, आदर्शवाद, यथार्थवाद, औपनिवेशिकता, सामाजिक न्याय, मर्यादा, सहानुभूति, विचलन, विघटन।

प्रस्तावना- प्रेमचंद ने अतीत का गौरव राग नहीं गाया, न ही उन्होंने भविष्य की हैरत-अंगेज़ कल्पना की। वे ईमानदारी के साथ वर्तमान काल की अपनी वर्तमान अवस्था का विश्लेषण करते रहे। उन्होंने देखा कि ये बंधन भीतर का है, बाहर का नहीं। एक बार अगर ये किसान और गरीब, यह अनुभव कर सकें कि संसार की कोइ भी शक्ति उन्हें नहीं दबा सकती तो ये निश्चय ही अपने समाज के प्रति सजग, जागरूक और अजेय हो जायेंगे। प्रेमचन्द ने अपने सृजनात्मक साहित्य लेखन में सामाजिकता पर विशेष जोर दिया है। उन्होंने अपनी कृतियों के द्वारा समाज के दबे-कुचले लोगों की समस्याओं प्रस्तुत किया। प्रेमचंद ने समाज में आर्थिक समानता पर हमेशा बल दिया। इसके साथ ही पूंजीवादी व्यवस्था की घोर निन्दा अपनी लेखनी में किया। इसके आलावा उन्होंने सामाजिक दायित्वों को सफलतापूर्वक निभाया।

प्रेमचंद अपनी सामजिक चेतना के मध्य राजनैतिक पक्षों को रखते हुए उनके अंतर्विरोधों को दर्शाने वाले महान लेखक दृष्टिगोचर हैं। जिनकी लेखनी प्रभाव आमजनमानस पर बड़े ही सरल एवं प्रभावी रूप में दृष्टिगोचर है। प्रेमचंद एक कथाकार के रूप में जितने प्रभावी हैं। उतने ही एक नाटककार के रूप में वे प्रभावी नज़र आते हैं। इनके नाटकों की प्रभावोत्पादकता को देखें तो कर्बला में हिन्दू-मुस्लिम एकजुटता तथा प्रेमभाव को बढ़ने का उद्देश्य रखते हैं वहीं संग्राम में ये सामंती एवं कृषक संघर्ष के अंतर्संबंध को दर्शाते हैं। अपने तीसरे नाटक प्रेम की वेदी में ये धार्मिक, सामाजिक तथा मानवीय संवेदनाओं तीनों तत्वों का उदघाटन करते हैं। अतः नाटक लेखन में भी इनकी लेखनी ठीक वैसा ही सामाजिक द्वंद्व तथा राजनैतिक दृष्टि का परिचय देते हैं जैसा उनके कथा साहित्य द्वारा प्राप्त होता है। एक अन्य आयाम में एक नाटककार का कर्म तथा नाटकीय महत्ता को व्यक्त करते हुए महादेवी वर्मा लिखती हैं, "नाटक जीवन की दृश्य अनुकृति के द्वारा जीवन का संशोधनात्मक अनुयोग है, अतः उसे साहित्य के अन्य प्रकारों से अधिक कठिन सामाजिक कर्म माना जा सकता है। काव्य, कथा आदि में सृजन और उपयोग दोनों ही दृष्टियों से दो पक्ष होते हैं-"साहित्यकार और पाठक। रचनाकार की एकांत में रची कृति एकांत में एकाकी पाठक के संवेदनशील हृदय पर अपना रहस्य प्रकट कर सार्थक हो जाती है। परन्तु नाटक की सार्थकता के लिए एकाकी पाठक और एकांत की स्थिति कोई महत्व नहीं रखती।"[1] अतः प्रेमचंद ठीक उसी प्रकार की उद्घोषणा अपने नाटकों में करते हैं जैसाकि उनके कथा-साहित्य में है।

ग्रामीण जीवन की मर्मस्पशी व्याख्या तथा ग्रामीण जनमानस का अनुयोग आदि दोनों सुख-दुःख के पक्ष इनकी लेखनी के अंग हैं। गोदान भी इसी प्रकार का इनका उपन्यास है। जिसमें ग्रामीण जनजीवन का सुख व दुःख दोनों पक्ष

INTERNATIONAL JOURNAL OF ARTS, COMMERCE & EDUCATION
A Multidisciplinary Peer-Reviewed, Refereed, Open Access Journal,
https://avjournals.com/ e-ISSN: 2347-7687, Vol 13, Issue 1, January-June 2025

उजागर होता है। किसानों की गहरी संवेदना उनका चिंतन तथा उनकी समस्या का यथार्थपरक उल्लेख प्रेमचंद बड़े ही मनोयोग से करते हैं किन्तु इनके नाटक लेखन में यह दिखाई नहीं पड़ता। लेकिन इससे इनके पात्रों की मूल चेतना तथा कर्म शक्ति में अंतर नहीं पड़ता। अपने "ग्राम समस्या के चित्रण में प्रेमचंद ने सामाजिक यथार्थ को अपने दृष्टि पथ से कभी ओझल नहीं होने दिया।सिद्धान्तः वे सामाजिक विकास (social evolution) की शांतिपूर्ण विचारधारा में विश्वास रखते थे, पर सामाजिक यथार्थ के प्रति उनकी इसी इमानदारी के कारण उनके किसान जाने या अनजाने संघर्ष की क्रांतिकारी डगर पर बढ़ते दिखाई देते हैं।"[2] अतः देखें तो प्रेमचंद मूलतः एक कथाकार हैं किन्तु नाटक लेखन के द्वारा इन्होंने अपनी कुशल अभिव्यक्ति दी है। इनके लेखन ने यह दर्शाया है कि विधा की भिन्नता से लेखक की मूल चेतना में अंतर नहीं आता है। प्रेमचंद की मूल चेतना में लोक कल्याण झलकता है। और इनके नाटक भी इस परिदृश्य समानता, एकता, प्रेम-सौहार्द तथा शान्ति के ही उद्देश्य लेकर चलते हैं। जिसका फल प्रधान नायक पात्रों के भोक्ता रूप में दर्शनीय है। कोई भी लेखन बेवजह नहीं होता।

प्रेमचंद ने नाटक लेखन भी अकारण नहीं किया। "प्रत्येक घटना का उद्देश्य होता है। दूसरे शब्दों में नाटक का प्रमुख नायक फल का भोक्ता माना जाता है। यह नाटक की अंतिम अवस्था होती है।"[3] अतः प्रेमचंद के पात्र इतने सशक्त होते हैं कि वे अपने सभी चरित्रों में फलीभूत सिद्ध दिखते हैं। वहीं प्रेमचंद स्त्री-पुरुष दोनों ही पत्रों को एक समान दृढ़ता देते दृष्टिगोचर हैं। प्रेमचंद के किरदारों में गोदान का होरी हो या बूढ़ी काकी की वृद्ध नायिका पात्र उपन्यास व कहानी दोनों ही दृष्टि में प्रेमचंद नायक द्वारा अपनी चेतना के अनुरूप परिणाम पाठक वर्ग के सम्मुख प्रस्तुत कर देते हैं। नाटक के दृष्टिकोण से भी प्रेमचंद ने ख्याति प्राप्त की है इनके कर्बला नाटक को ही देखें तो सामाजिक द्वंद्ध की दृष्टि से नाटक का राजनैतिक पक्ष उजागर होता है। स्वतन्त्रता पूर्व की कालावधि में हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य को देखते हुए तथा राजनैतिक पृष्ठभूमि के सादृश्य कर्बला नाटक को प्रेमचंद ने लिखा। इस्लामी सभ्यता के शीर्षक रूप में साप्ताहिक प्रताप, दिल्ली से दिसंबर 1925 ई. के विशेषांक में प्रेमचंद का यह आलेख प्रकाशित हुआ था। उनका "यह आलेख स्वराज्य (आज़ादी) से 22 वर्ष पहले का है। स्वराज पर अग्रसर होने की बात बहुत पुरानी हो गई और इतिहास का अंग बन गई। स्वराज मिल चुका, लेकिन अंग्रेजी साम्राज्य ने अपने कुत्सित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए हिन्दू-मुस्लिम दुश्मनी का जो बीज बोया और फसल उगाई थी फलस्वरूप देशबंधुओं ने इस्लाम को समझने, उससे लाभान्वित होने के बजाय इस्लाम के प्रति आमतौर पर अनभिज्ञता, परायापन, शक-शुबहा, दुराग्रह, घृणा, द्वेष या वैमनस्य की नीति अपनाए रखी (नगण्य अपवादों को छोड़कर)। फिर इस दिशा में वे और अधिक आक्रामक हो गए।"[4] अतः प्रेमचंद अपनी देशभक्ति, राष्ट्रवादिता, चिंतन-शक्ति तथा शान्ति-सौहार्द को लेकर प्रचलित एवं प्रासंगिक लेखक हैं जिन्होंने अपनी लेखनी से पाठक वर्ग को जागरूक किया है। यह कार्य तत्कालीन समय में प्रेमचंद भली-भांति कर रहे थे।

इस परिदृश्य में प्रेमचंद नाटक लेखन के साथ ही फिल्म जगत में भी सम्मिलित होने की संभावना को नकार जाते हैं अन्यथा हिंदी फिल्म जगत का स्वरुप शायद और कुछ दिखता। "हालाकि इसी बीच बॉम्बे टॉकीज के हिमांशु रॉय भी चाहते थे। मुंशी प्रेमचंद बॉम्बे टॉकीज से जुड़ें। पर मुंबई की खराब आबोहवा और गिरती सेहत का हवाला देते हुए उन्होंने हिमांशु रॉय को साफ़ मना कर दिया।"[5] प्रेमचंद का अपना एकांत केवल साहित्य को ही समर्पित था। उन्हें सफलता तथा ख्याति जैसी चीजों का लोभ नहीं था। वे अपने आप में इतने ख्यातिलब्ध हो चुके थे कि गाँव से शहर तथा जनता से सिनेमा तक वे सीधी पहुँच रखते थे। वे किसी संकीर्णता या अपवाद से ग्रस्त नहीं थे। किन्तु वे अपने स्वास्थ्य को लेकर अस्थिर रहते थे इसी कारण वे सामर्थ्यहीन होकर बॉमबे टॉकीज नहीं रहे। जबकि नाटक लेखन की ही उनकी दक्षता उनको वहां तक ले गई। फलता प्रेमचंद किसी अवसर के मोहताज लेखक नहीं ज्ञात पड़ते। दूसरी और कर्बला उनका संवादात्मक उपन्यास ज्ञात पड़ता है। जिसे उन्होंने नाटक घोषित किया किन्तु केवल पढ़ने के उद्देश्य से।

पद-सामाजिक प्रतिष्ठता और राजतन्त्र व्यवस्था में प्रायः अधिकारों का स्थान्तरण वंशवाद के अनुरूप होता है। फलतः कर्बला नाटक में भी प्रेमचंद ने यह इंगित किया कि इमाम हुसैन को हजरत मुहम्मद के नवासे होने के नाते राजनैतिक-सामाजिक परंपरा अनुरूप खलीफा का पद मिलना चाहिए था किन्तु कुटिल और षड्यंत्रकारी यज़ीद ने अपनी छल नीति के द्वारा खलीफा का पद हासिल कर लिया। जबकि "हुसैन हज़रत अली और फातिमा जोहरा के बेटे और हजरत मुहम्मद के नवासे (नाती) थे, वे बड़े विद्वान, सच्चरित्र शान्ति-प्रिय, नम्र, उदार, सहनशील, ज्ञानी और धार्मिक पुरुष व अद्वितीय वीर थे, लेकिन राजनीतिक छल-प्रपंच और कुत्सित व्यवहारों से अपरिचित थे। यज़ीद इन सब छलपूर्ण चालों में निपुण था। उसने अपने पिता अमीर मुआबिया से कूटनीति की शिक्षा पायी थी।"[6] मुंशी प्रेमचंद के लेखन विशेषकर उनके नाटक संग्राम, कर्बला तथा प्रेम की वेदी और कुछ कहानियों के नाट्य रूपांतरण में सामाजिक द्वंद्व का राजनैतिक पहलू गहराई से जुड़ा हुआ है। उनका नाटक लेखन भारतीय समाज के आंतरिक संघर्षों को ब्रिटिश उपनिवेशवाद की व्यापक राजनैतिक पृष्ठभूमि द्वारा देखता है। प्रेमचंद ने सामाजिक द्वंद्व को केवल नैतिकता या निजी

INTERNATIONAL JOURNAL OF ARTS, COMMERCE & EDUCATION
A Multidisciplinary Peer-Reviewed, Refereed, Open Access Journal,
https://avjournals.com/ e-ISSN: 2347-7687, Vol 13, Issue 1, January-June 2025

संबंधों तक सीमित नहीं रखा अपितु उसकी जड़ों में मौजूद शोषणकारी व्यवस्था को पहचाना जिसके निहित स्पष्ट संबंध राजनैतिक तथा सामाजिक समस्याओं में विद्यमान हैं। प्रेमचंद ने समाज में व्याप्त तीन शोषणकारी जमातों को प्रकट किया है। जिन्हें औपनिवेशिक राजनैतिक व्यवस्था का संरक्षण प्राप्त था।

जमींदार जमात ब्रिटिश सरकार के साथ मिलकर किसानों का क्रूरता से शोषण करता था। उनके नाटक और कहानियाँ दिखाते हैं कि कैसे जमींदारी प्रथा एक राजनैतिक-सामाजिक शस्त्र थे। जिसके तहत किसान तथा वंचित-शोषित वर्ग जीवन भर कर्ज और गुलामी में दबे रहते थे। प्रेमचंद ने पूंजीवादी पद्धति के दोषों को भी उजागर किया। जहाँ गरीबों की झोपड़ियाँ उजाड़कर कल-कारखाने बनाए जाते थे। यह सीधे तौर पर ब्रिटिश शासन की आर्थिक नीतियों से जुड़ा राजनैतिक शोषण था। पुलिस, पटवारी और अन्य सरकारी कर्मचारी औपनिवेशिक राज के वे मोहरे थे जो जमींदारों और महाजनों के साथ मिलकर आम जनता का उत्पीड़न करते थे। इस भ्रष्ट शासन प्रणाली को दिखाना ही अपने आप में एक राजनैतिक आलोचना थी। प्रेमचंद ने सामाजिक द्वंद्वों के माध्यम से जनता को उनकी दुर्दशा के लिए जिम्मेदार राजनैतिक व्यवस्था के प्रति जागरूक किया। उनके पात्र, विशेषकर किसान, मजदूर और दलित, धीरे-धीरे अपने शोषण के पीछे की राजनैतिक साजिश को पहचानते हैं। यह चेतना राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा थी। प्रेमचंद पर गांधीवाद का गहरा प्रभाव था। उन्होंने अपने साहित्य में सत्याग्रह, समाज-सुधार और सामाजिक एकता जैसे राजनैतिक विचारों को स्थान दिया, जो तत्कालीन स्वतंत्रता संग्राम की रीढ़ है। प्रेमचंद का मानना था कि भारत न केवल ब्रिटिश उपनिवेश के अधीन है, बल्कि एक आंतरिक उपनिवेश भी है, जहाँ देश के ही सामंत और पूंजीपति जनता को गुलाम बनाए हुए हैं। इस विचार को दर्शाना उस समय की राजनैतिक विमर्श में एक क्रांतिकारी कदम था। वहीं जातिवाद, छुआछुत, दहेज प्रथा और सांप्रदायिकता जैसी सामाजिक कुरीतियाँ राजनैतिक रूप से भी देश को दुर्बल कर रही थीं।

जातिवाद की राजनीति, सद्गति और ठाकुर का कुआँ जैसी रचनाओं में दलितों का शोषण दिखाया गया है, जो एक प्रकार से समाज को तोड़ने वाली विभाजनकारी राजनीति का परिणाम था। प्रेमचंद ने ब्राह्मणवादी पाखंड को चिन्हित करके सामाजिक सुधार की राजनैतिक आवश्यकता पर बल दिया है। प्रेमचंद ने हिंदू-मुस्लिम एकता पर भी बल दिया और सांप्रदायिकता को देश की एकता के लिए खतरा माना। उनके नाटक कर्बला (1924) का उद्देश्य विभिन्न धर्मों के प्रति सद्भाव पैदा करके राजनैतिक 'फूट डालो और राज करो' की नीति का विरोध करना था। संक्षेप में, प्रेमचंद के नाटक और साहित्य में सामाजिक द्वंद्व, जैसे कि गरीब और अमीर का संघर्ष, नारी की समस्याएँ, और जातिगत भेदभाव, सीधे तौर पर ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन और उसे संरक्षण देने वाली सामंती और पूंजीवादी व्यवस्था की आलोचना करते हैं। उनके लिए सामाजिक और राजनैतिक मुद्दे एक-दूसरे से अलग नहीं थे; सामाजिक न्याय की उनकी पुकार का सीधा अर्थ राजनैतिक और आर्थिक शोषण से मुक्ति था। अतः भारतीय जनमानस के सामाजिक द्वंद्व के परिप्रेक्ष्य में जो राजनैतिक पक्ष उजागर हुए उसके प्राकट्य का प्रयास प्रेमचंद के नाटकों द्वारा दृष्टिगोचर है। "देशी-विदेशी सामाजिक और राजनीतिक ताकतों के खिलाफ अकेले प्रेमचंद ने इन सबसे जितना साहित्यिक संघर्ष किया है, उतना अधिकाँश कहानीकारों ने मिलकर भी नहीं किया होगा। सच यह है कि वे हिंदी के युग प्रवर्तक कहानीकार हैं।"[7] यद्यपि उन्हें नाटककार के रूप में नहीं याद किया जाता है किन्तु वे नाटक लेखन के परिप्रेक्ष्य में महत्वपूर्ण रुपेण दृष्टिगोचर हैं। उन्होंने अपनी सामाजिक सोच व राजनैतिक संवेदना को आम पाठक वर्ग तक नाटकों के द्वारा पहुँचाया। जिसमें उनके सामाजिक एकता, संकीर्णता का विरोध, स्त्री विमर्श, वर्ग संघर्ष, कृषि समस्या का उन्मूलन तथा सामंती सत्ता का अंत आदि राजनैतिक-सामाजिक उद्देश्य पूर्ण होते दृष्टिगोचर हैं। "प्रेमचंद के साहित्य में भारतीय समाज की विभिन्न समस्याओं का विस्तार से चित्रण किया गया है। उन्होंने समाज के हर तबके, विशेषकर गरीब, शोषित और दलित वर्ग की समस्याओं को प्रमुखता दी। उनके लेखन में सशक्त सामाजिक मुद्दे जैसे गरीबी, भेदभाव, बाल विवाह, शिक्षा, धर्म, और राजनीति पर गहरी सोच दिखाई देती है।"[8] दरअसल प्रेमचंद के लेखन में वही समस्याएं प्रकट हुईं हैं जिन्हें उन्होंने निकट से देखा है, या महसूस किया है। वे इन्हीं मायनों में यथार्थवादी साहित्यकार हैं। इनके नाटकों को एकबारगी में पढ़ने से ही इनके सामाजिक द्वंद्व का राजनैतिक पक्ष उजागर हो जाता है। "प्रेमचंद ने संग्राम (1923), कर्बला (1924) और प्रेम की वेदी (1933) नाटकों की रचना की। ये नाटक शिल्प और संवेदना के स्तर पर अच्छे हैं, लेकिन उनकी कहानियों और उपन्यासों ने इतनी उंचाई प्राप्त कर ली थी कि नाटक के क्षेत्र में प्रेमचंद को कोई खास सफलता नहीं मिली। ये नाटक वस्तुतः संवादात्मक उपन्यास बन गए हैं।"[9] इसका कारण प्रेमचंद का मूलतः कथाकार होना है। वे अपने लेखन में पूर्णतः यथोचित दर्शनीय हैं ।

INTERNATIONAL JOURNAL OF ARTS, COMMERCE & EDUCATION
A Multidisciplinary Peer-Reviewed, Refereed, Open Access Journal,
https://avjournals.com/ e-ISSN: 2347-7687, Vol 13, Issue 1, January-June 2025

वे सामाजिक परिप्रेक्ष्य में जहाँ समाज-सुधारक दिखाई पड़ते हैं तो वहीं राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में एक राष्ट्रवादी चिन्तक दिखाई पड़ते हैं। किन्तु उनके लेखन में मूल संवेदना को लेकर एकरूपता दिखाई पड़ती है। वो अपने लेखन द्वारा सामाजिक तथा राजनैतिक पहलुओं में न्याय करते दृष्टिगोचर हैं। "प्रेमचंद की रचनात्मकता न्याय साहित्यिक रूप में निखर कर आई है। वह बहुमुखी प्रतिभा के धनी व्यक्ति थे। उनकी रचनाओं में समकालीन इतिहास बोलता हुआ दीखता है। उन्होंने अपनी रचनाओं में जनसाधारण की भावनाओं, उनकी समस्याओं और उनकी परिस्थितियों का समुचित विवेचन किया है। उनकी कृतियाँ भारत के सबसे अधिक विशाल और विस्तृत वर्ग की कृतियों में मानी जाती है।"[10] प्रेमचंद का सामाजिक द्वंद्ध का राजनैतिक पक्ष इन्हीं मायनों में साकार नज़र आता है कि उनके साहित्य का सरोकार भारतीय जनमानस की आत्मा के उद्गार से जुड़ा है। वे उनकी समस्याओं को, उनके सामान्य जनजीवन की आपा-धापी को तथा संवेदना को इतिहास, राजनीति तथा आर्थिक पक्षों के आलोक में प्रकट करते हैं। अतः इन्हीं कारणों से प्रेमचंद के नाटक भी आमजनमानस के मध्य आज भी प्रचलित दृष्टिगोचर हैं जबकि वे संख्या में अल्प हैं, किन्तु इनका मर्म काफी गंभीर एवं अद्यतन है। "प्रेमचंद भारतीय समाज के लिए सदा प्रासंगिक रहे हैं और आज उसकी प्रासंगिकता और अधिक बढ़ गई है। हमारा समाज आगे के बदले पीछे जा रहा है। जिस पिछड़ेपन के विरुद्ध प्रेमचंद ने संघर्ष किया था, वह आज तो और भी सघन हो गया है। आर्थिक स्तर पर जनता की गरीबी, राजनीतिक स्तर पर विघटनकारी तत्वों का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है। सांस्कृतिक स्तर पर जातीयता का ज़हर फैलता जा रहा है, धार्मिक उन्माद बढ़ा है। समाज को पीछे धकेलने वाली जिन शक्तियों से प्रेमचंद लड़े थे, उनसे समाज के प्रभावशाली गिरोहों ने उन्हें अपने निजी क्षुद्र स्वार्थों के लिए समझौता कर लिया है। जिनपर समाज और इतिहास को बदलने की ज़िम्मेदारी दी गई है, वह अपनी जिम्मेदारी नहीं निभा रहे हैं तो होगा क्या? और बुरे दिन आएंगे। साहित्यकारों को इन विपरीत स्थितियों को समाप्त करने के लिए साहित्य को एक औजार के रूप में उपयोग करना चाहिए, जैसा प्रेमचंद ने किया था। जहाँ संस्कार है, सकारात्मक आचार और विचार हैं, वहां प्रेमचंद है। वह उन्हें बनाते हैं, निखारते हैं, संवारते हैं।"[11] प्रेमचंद किसी निहित स्वार्थ या पदलोलुप वृत्ति के लेखक नहीं थे। जिनके नाटकों से इस तथ्य की पुष्टि होती है।

अतः उनके नाटकों को देखें तो, संग्राम' प्रेमचंद का एक प्रारंभिक नाटक है, जिसे उन्होंने स्वयं 'अनाधिकार चेष्टा' कहा था, लेकिन यह ग्रामीण जीवन की समस्याओं पर गहरा कटाक्ष करता है। इनके नाटकों की पृष्ठभूमि में सामंती परिवेश और ग्रामीण समाज है। इनके संग्राम नाटक में मुख्य रूप से किसानों की दुर्दशा, किसानों की गरीबी, उनकी फिजूलखर्ची, और इन कारणों से उन पर लगातार बढ़ते कर्ज की समस्या को दर्शाता है। संग्राम नाटक में सामंती वर्ग के अत्याचार और किसानों की लाचारी का चित्रण है। वे किस तरह अंग्रेजों के माध्यम से भी किसानों का शोषण करते हैं। नाटक में नारी शोषण का भी चित्रण है, हालाँकि नायिका अंत में अपने धर्म और नैतिक मूल्यों को बचाए रखती है। इसका सबसे बड़ा संदेश जमींदारों और किसानों के बीच के संघर्ष को उजागर करना है। यह बताता है कि भारतीय समाज की जड़ें किन आर्थिक और सामाजिक असमानताओं में फँसी हुई हैं।

संग्राम नाटक किसानों को कर्ज के चक्रव्यूह से निकलने, फिजूलखर्ची रोकने और अपनी समस्याओं का समाधान खोजने के लिए प्रेरित करता है। इसी प्रकार 'कर्बला' प्रेमचंद का एक ऐतिहासिक-धार्मिक नाटक है, जिसकी कथा इस्लाम धर्म के इतिहास की एक अत्यंत महत्वपूर्ण घटना पर आधारित है। नाटक की कथा कर्बला के धर्म संग्राम पर आधारित है, जो इस्लाम के संस्थापक हज़रत मुहम्मद के नवासे हज़रत हुसैन और तत्कालीन शासक यजीद की सेना के बीच 680 ई. में हुआ था। यजीद एक तानाशाह और अन्यायी शासक था जो जबरन ख़लीफ़ा बनना चाहता था। दूसरी ओर, हज़रत हुसैन, जो विद्वान, सच्चरित्र, न्यायप्रिय और मानवता प्रेमी थे, यजीद को ख़लीफ़ा के रूप में स्वीकार करने को तैयार नहीं थे, क्योंकि वह अधर्म और अन्याय का प्रतीक था। हुसैन अपने परिवार और समर्थकों के साथ थे, जिनकी संख्या केवल बहत्तर थी और वहीं यजीद की सेना में हजारों लोग थे। यजीद ने हुसैन और उनके साथियों को पानी तक लेने से रोक दिया। तमाम मुश्किलों के बावजूद, हुसैन ने सत्य और न्याय के पक्ष में लड़ते हुए शहादत को स्वीकार किया। अतः यह नाटक दुःखान्त है, जहाँ नायक इमाम हुसैन की पराजय होती है, लेकिन प्रेमचंद इसे नैतिक और धार्मिक विजय के रूप में देखते हैं। कर्बला नाटक यजीद के विरुद्ध हुसैन का समर्थन करता है। यह संदेश देता है कि सत्य और न्याय के लिए बलिदान देना, सत्ता के आगे झुकने से कहीं अधिक बड़ा गौरव है। प्रेमचंद ने कर्बला नाटक की रचना विशेष रूप से हिंदू-मुस्लिम वैमनस्य को दूर करने के लिए की थी। उन्होंने भूमिका में लिखा कि हिंदू, मुस्लिम महापुरुषों के चरित्रों का अध्ययन करके उनसे आत्मीयता का संबंध स्थापित कर सकते हैं। यह आज भी सांप्रदायिक एकता का महान संदेश देता है।

INTERNATIONAL JOURNAL OF ARTS, COMMERCE & EDUCATION
A Multidisciplinary Peer-Reviewed, Refereed, Open Access Journal,
https://avjournals.com/ e-ISSN: 2347-7687, Vol 13, Issue 1, January-June 2025

कर्बला नाटक महान मानवीय मूल्यों, पारिवारिक प्रेम बलिदान और धर्म की रक्षा के लिए अडिग रहने की प्रेरणा देता है। ये दोनों ही नाटक प्रेमचंद के साहित्य की तरह, सामाजिक सुधार और मानवीय चेतना को जगाने का काम करते हैं। 'प्रेम की वेदी' प्रेमचंद का अंतिम नाटक है और यह उनके उपन्यासों तथा कहानियों की तरह ही प्रेम, सामाजिक बंधन और आधुनिक चेतना के द्वन्द्व को दर्शाता है। यह नाटक उस समय लिखा गया था जब भारतीय समाज में आधुनिक विचार, पश्चिमी शिक्षा और सामाजिक सुधार आंदोलनों का प्रवेश हो रहा था। प्रेम की वेदी नाटक भारतीय सामाजिक संदर्भ में स्थापित है, जहाँ रूढ़िवादी धार्मिक-सामाजिक मर्यादाएँ और आधुनिकता के विचार एक-दूसरे से टकराते हैं। विषय-वस्तु की दृष्टि से नाटक मुख्य रूप से प्रेम के शाश्वत सत्य और मानवीय आत्मा के लिए प्रेम के महत्व को उजागर करता है। प्रेमचंद के अनुसारप्रेम की वेदी नाटक यह दिखाता है कि किस प्रकार धार्मिक और सामाजिक मर्यादाएँ चाहे वह हिंदू हों, मुस्लिम हों या क्रिश्चियन, इंसान के सच्चे प्रेम और आधुनिक विचार-विमर्श को सीमित करती हैं। प्रेम की वेदी नाटक में कुछ अंश ऐसे हैं जहाँ पात्र इन पारंपरिक मर्यादाओं की सीमा को तोड़ने का साहस दिखाते हैं। यह प्रेमचंद की प्रगतिशील चेतना का एक उदाहरण है, जो बंधनों से मुक्त, शुद्ध मानवीय प्रेम को प्रतिष्ठित करने की कोशिश करती है। हालाँकि इस नाटक की विस्तृत कहानी कर्बला या संग्राम की तरह किसी एक ऐतिहासिक घटना पर आधारित न होने के कारण अधिक प्रचलित नहीं है, इसका केंद्रीय विषय एक ऐसे आदर्श प्रेम की स्थापना है जो सभी सामाजिक और धार्मिक रूढ़ियों से ऊपर है। प्रेम की वेदी नाटक का मुख्य संदेश यह है कि प्रेम सबसे पवित्र और सर्वोच्च मानवीय भावना है। सच्चे प्रेम के सामने संकीर्ण सामाजिक बंधन और दिखावटी धार्मिक मर्यादाएँ टिक नहीं पाती हैं।

'प्रेम की वेदी' नाटक दिखाता है कि कैसे शिक्षा और नए विचारों के आने से लोग सदियों पुरानी सामाजिक रूढ़ियों पर प्रश्न उठाना शुरू करते हैं। प्रेम की वेदी नाटक प्रेम को केवल शारीरिक आकर्षण नहीं, बल्कि आत्मा का पोषण करने वाला अमृत मानता है, जो मनुष्य के नैतिक और आध्यात्मिक जीवन को उन्नत करता है। इस प्रकार प्रेमचंद के तीनों नाटक संग्राम, आर्थिक-सामाजिक शोषण, कर्बला धार्मिक-राजनैतिक न्याय, और प्रेम की वेदी, मानवीय प्रेम और मर्यादा जैसे प्रासंगिक मुद्दों को लेकर अपने समय की ज्वलंत समस्याओं और शाश्वत मानवीय मूल्यों का दर्पण प्रस्तुत करते हैं, जो आज भी अत्यंत प्रासंगिक हैं।

निष्कर्ष- अतः यह स्पष्ट है कि प्रेमचंद का सामाजिक द्वंद्ध उनके राजनैतिक संघर्ष से अनुभव होता है। वे एक राष्ट्र-चिन्तक साहित्यकार के रूप में दिखाई पड़ते हैं। किन्तु वे अपने सिद्धांतों से नहीं डिगते हैं। एक लेखक के रूप में इनका दायित्व लेखन कर्म का है। जिसे बखूबी निभाते हैं। फलतः कहानी-उपन्यास के अतिरिक्त नाटक लेखन में भी इनका सामर्थ्य दिखाई पड़ता है। इन तीनों नाटकों में प्रेमचंद का उद्देश्य केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि समाज को जागरूक करना और परिवर्तन की प्रेरणा देना रहा है। उनके नाटक आज भी प्रासंगिक हैं क्योंकि वे मनुष्य की आत्मा को झकझोरते हैं और सामाजिक न्याय की पुकार बनते हैं। प्रेमचंद के नाटक केवल मंचीय प्रस्तुति नहीं हैं, बल्कि वे समाज के लिए आईना हैं। इन नाटकों में उन्होंने सामाजिक अन्याय, धार्मिक मूल्यों और मानवीय संवेदनाओं को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। 'संग्राम', 'कर्बला', और 'प्रेम की वेदी' आज भी प्रासंगिक हैं, क्योंकि वे न केवल साहित्यिक सौंदर्य प्रदान करते हैं, बल्कि समाज को सोचने और बदलने की प्रेरणा भी देते हैं। उन्होंने इन नाटकों की रचना मनुष्य मात्र को जागरूक और सजग करने के उद्देश्य से किया है। इन नाटकों के समाजशास्त्रीय विश्लेषण से ही उन्हें आज के संदर्भ में व्याख्यायित किया जा सकता है। इस शोध अध्ययन का यही उद्देश्य भी है। इस क्रम में देखा जाय तो, 'संग्राम' नाटक में सामाजिक अन्याय के विरुद्ध संघर्ष, 'कर्बला' में धर्म और नैतिकता की गहराई, और 'प्रेम की वेदी' में प्रेम तथा स्वतंत्रता की पुकार है। ये तीनों नाटक प्रेमचंद की साहित्यिक दृष्टि और सामाजिक प्रतिबद्धता को दर्शाते हैं। उन्होंने नाटक को एक ऐसा माध्यम बनाया जिससे समाज को जागरूक किया जा सके। इसलिए आज भी उनके नाटक प्रासंगिक हैं, क्योंकि वे मनुष्य की आत्मा को झकझोरते हैं और सामाजिक परिवर्तन की उम्मीद को दिशा देते हैं।

संदर्भ-

1. साहू, अरुण कुमार, वर्मा, डॉ. रामकुमार (सम्पादक), हिंदी नाटक और रंगमंच, पृष्ठ-9
2. गुप्त, रामदीन, प्रेमचंद और गांधीवाद, पृष्ठ-20

3. झा, दशरथ, हिंदी नाटक की रूपरेखा, पृष्ठ-3
4. प्रेमचंद, मुंशी प्रेमचंद के विचार इस्लाम के बारे में, पृष्ठ-5
5. पाण्डेय, हुबनाथ (सम्पादक), हिंदी संभाषण पत्रिका, पृष्ठ-71
6. नंदन ,कन्हैयालाल (संपादक), सारिका, पृष्ठ-57
7. साहू, अरुण कुमार (संपा.), गगनांचल, पृष्ठ-22
8. यादव, डॉ. इन्द्रजीत निवासराव (सं.), जर्नल ऑफ़ एडवांस एंड स्कोलरी रिसर्च इन अलाइड एजुकेशन, पृष्ठ-91
9. राव, नारायण सिंह (सं.), कॉसमॉस एन इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ आर्ट्स एन हायर एजुकेशन रिफर्ड रिसर्च, पृष्ठ-17
10.https://nayidhara.in/gadya-dhara/article-about-significance-of-premchand-in-society-by-ramshobhit-prasad-singh-nayi-dhara/
11. साहू, अरुण कुमार (संपा.), गगनांचल, पृष्ठ-21